हरिकृष्ण कौल के उपन्यास 'व्यथ-व्यथा' में कश्मीरी पंडितों की विस्थापन-पीड़ा और प्रमुख समस्याएँ

रुकसाना सादिक

एवं

प्रो. ज़ाहिदा जबीन

सारांश

हरिकृष्ण कौल का उपन्यास **'व्यथ-व्यथा'** कश्मीर में बढ़ती हिंसा, कश्मीरी पंडितों के भय, घर-विहीनता और सांस्कृतिक विछोह को एक परिवार की त्रासदी के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। व्यथ- व्यथा उपन्यास की विशेषता यह है कि वह इतिहास को आँकड़ों में नहीं, बल्कि बंद होते घर, बदलते पड़ोस, असुरक्षित नौकरी, बर्फ में मिली बेटी और जम्मू के कैंप-प्रश्न में मूर्त करता है। कृति का शीर्षक ही इसके केंद्रीय द्वंद्व को व्यक्त करता है- **'व्यथ'** अर्थात वितस्ता और मातृभूमि से दूरी, तथा **'व्यथा'** अर्थात विस्थापित मनुष्य के निकट आती स्थायी पीड़ा।

बीज शब्द: कश्मीरी पंडित, विस्थापन, आतंकवाद, स्त्री-असुरक्षा, पहचान-संकट, सांस्कृतिक स्मृति, व्यथ-व्यथा।

प्रस्तावना-

कश्मीर भारतीय सभ्यता, ज्ञान-परंपरा, शैव दर्शन, सूफी-संस्कृति और साझा लोकजीवन का महत्त्वपूर्ण भूभाग रहा है। किन्तु बीसवीं शताब्दी के अंतिम दशकों में राजनीतिक अस्थिरता, उग्रवाद, लक्षित हत्याओं, धार्मिक ध्रुवीकरण और प्रशासनिक निष्क्रियता ने इस बहुल सांस्कृतिक संसार को गहरे संकट में डाल दिया। इसका सबसे कठोर परिणाम **कश्मीरी पंडितों का सामूहिक विस्थापन** था। अनेक परिवार घर, खेत, बाग, नौकरी, पड़ोस, देवस्थल और स्मृतियाँ छोड़कर जम्मू तथा अन्य नगरों में

अस्थायी आश्रय लेने को विवश हुए। यह घटना केवल निवास-परिवर्तन नहीं थी; इसके साथ नागरिक गरिमा, सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक सुरक्षा और सांस्कृतिक निरंतरता भी टूट गई। उपलब्ध विश्लेषणात्मक सामग्री इसी तथ्य पर बल देती है कि विस्थापन का आरंभ घाटी से बाहर निकलने के क्षण में नहीं, बल्कि तब हो जाता है जब मनुष्य अपने ही घर में भय, संदेह और असुरक्षा अनुभव करने लगता है।

> *"**व्यथ** कश्मीरी भाषा में कश्मीर की वितस्ता नदी का नाम है... हमारी अंतरंग आत्मीय व्यथ ने हमें अपने से दूर रखा और इसके विपरीत **व्यथा** हमारे बहुत निकट आई।"*

यह कथन उपन्यास की संपूर्ण अर्थ-रचना का सूत्र है। **व्यथ** नदी, भूगोल, घर और सांस्कृतिक आत्मीयता का प्रतीक है; जबकि **व्यथा** वह मानसिक, सामाजिक और सामुदायिक पीड़ा है जो मातृभूमि से दूर जाने के बाद भी विस्थापित व्यक्ति के साथ रहती है।

1. विस्थापन, घर-विहीनता और गरिमा का संकट

विस्थापन स्वेच्छिक प्रवास से भिन्न है। प्रवासी प्रायः अवसर की खोज में स्थान बदलता है, जबकि विस्थापित व्यक्ति जीवन और सम्मान बचाने के लिए अपना परिचित संसार छोड़ता है। उपन्यास में मोहनकृष्ण का घर केवल संपत्ति नहीं, बल्कि पूर्वजों की स्मृति, पड़ोस, भाषा, सामाजिक पहचान और आत्मसम्मान का केंद्र है। इसलिए उसका कश्मीर छोड़ना एक मकान से प्रस्थान नहीं, बल्कि **समूचे जीवन-संसार से विच्छेद** है।

> *"हम कश्मीरी पंडित सिर्फ अपनी **जान और इज्जत** बचाने के लिए अपने घर, अपने खेत, बाग और जमीन, अपनी बिजनेस या नौकरी छोड़कर कश्मीर से बाहर..."*

इस उद्धरण में घर, जमीन, व्यवसाय और नौकरी का एक साथ उल्लेख बताता है कि विस्थापन आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक हानियों का संयुक्त अनुभव है। विस्थापित परिवार सुरक्षित स्थान तक पहुँच तो जाता है, पर वह वहाँ स्थापित नागरिक नहीं बनता; वह रिश्तेदारों, धर्मशालाओं, अस्थायी कमरों और टेंटों पर निर्भर व्यक्ति बन जाता है। इस प्रकार **घर का स्वामी राहत-प्राप्तकर्ता** में बदल जाता है।

2. पहचान-संकट और शिविर-जीवन

विस्थापन के बाद व्यक्ति की पुरानी पेशागत और सामाजिक पहचान सिकुड़कर प्रशासनिक श्रेणी में बदल जाती है। अशोक शिक्षित युवक, पुत्र और अपने मोहल्ले का निवासी है, किन्तु जम्मू पहुँचते ही उसे व्यक्तिगत नाम से पहले समुदाय और कैंप के आधार पर पहचाना जाता है।

> *"आप **कश्मीरी पंडित** लगते हैं... आपको किस कैम्प में जाना है?" "कैम्प? मैं समझा नहीं।"*

यह संवाद विस्थापित पहचान की विडंबना को तीखे रूप में प्रकट करता है। अशोक के लिए 'कैम्प' अभी अपरिचित शब्द है, पर स्थानीय व्यवस्था के लिए वही उसकी संभावित मंजिल है। इस क्षण में व्यक्ति का नाम, शिक्षा और पारिवारिक इतिहास पीछे छूट जाते हैं तथा **'माइग्रेंट'**, **'रिफ्यूजी'** और **'कैंप-वासी'** जैसे लेबल उसकी नई सामाजिक वास्तविकता बन जाते हैं। संकरे अस्थायी आवास, निजता का अभाव, आर्थिक निर्भरता और अनिश्चित वापसी विस्थापन को दीर्घकालीन मानसिक आघात में बदल देते हैं।

3. आतंकवाद और सामुदायिक विश्वास का विघटन

आतंकवाद केवल हत्या नहीं करता; वह सामान्य जीवन की लय, पड़ोस की आत्मीयता और नागरिक विश्वास को भी नष्ट करता है। उपन्यास में धमकी, हिट-लिस्ट, कर्फ्यू, जुलूस, अर्थी पर पत्थरबाजी और रात के नारों के माध्यम से भय

क्रमशः घर के भीतर प्रवेश करता है। मोहनकृष्ण का परिवार पहले बाहर की घटनाएँ सुनता है, फिर अपनी बेटी, नौकरी, यात्रा और जीवन को उन्हीं घटनाओं से घिरा पाता है।

> *"हत्या केवल **हाड़-मांस** की ही नहीं, **आपसी सौहार्द और परस्पर विश्वास** की भी हुई है।"*

यह कथन आतंक की व्यापक सामाजिक परिणति को व्यक्त करता है। कौल किसी पूरे समुदाय को दोषी ठहराने के बजाय कट्टरता, राजनीतिक स्वार्थ, प्रशासनिक विफलता और भय से उत्पन्न मौन की आलोचना करते हैं। रमज़ान जू की मानवीय विवशता और फ़ारूक की कट्टरता के बीच का विरोध दिखाता है कि हिंसा मुस्लिम परिवारों के भीतर भी संबंधों को तोड़ती है; फिर भी कथा का केंद्रीय अनुभव कश्मीरी पंडितों का लक्षित भय और घर-विहीन होना ही बना रहता है।

4. स्त्री-असुरक्षा और नीरजा की त्रासदी

संघर्षग्रस्त समाज में स्त्री की असुरक्षा धर्म, देह, वस्त्र, सार्वजनिक स्थान और रोजगार- सभी स्तरों पर बढ़ जाती है। नीरजा शिक्षित है, सरकारी अध्यापिका बनना चाहती है और परिवार के भविष्य में योगदान दे सकती है; पर उसकी नियुक्ति खुशी के साथ भय भी लाती है। दूरस्थ और असुरक्षित स्थान पर नौकरी राज्य की उपलब्धि के बजाय जीवन के लिए खतरा बन जाती है।

> *"ऑर्डर देखकर नीरजा, शांता और मोहनकृष्ण को **खुशी से ज्यादा परेशानी** हुई।"*

नीरजा की हत्या उपन्यास की चरम त्रासदी है। उसके साथ एक बेटी ही नहीं, शिक्षित नई पीढ़ी, स्त्री की आत्मनिर्भरता, परिवार की आर्थिक आशा और घर की भावी निरंतरता भी नष्ट होती है। पिता की पुकार निजी शोक को सामुदायिक असहायता में रूपांतरित कर देती है।

*"**मेरी पिंकी! मेरी नीरजा!** "मेरी जिस पाक और पवित्र बेटी की लाश और लावण्य को प्रकृति ने बर्फ के **स्वच्छ, शुद्ध और श्वेत कफन** में ढक रखा है..."*

कश्मीर की सफेद बर्फ यहाँ सौंदर्य का प्रतीक न रहकर मृत बेटी का कफन बन जाती है। प्रकृति की पवित्रता और मनुष्य की क्रूरता का यह विरोध नीरजा की पीड़ा को अत्यंत मार्मिक बनाता है तथा स्पष्ट करता है कि स्त्री और धार्मिक पहचान आतंक के समय असुरक्षा को कई गुना बढ़ा देती हैं।

5. शिक्षा, रोजगार और भविष्य का विघटन

शिक्षा सामान्यतः आत्मनिर्भरता और सामाजिक गतिशीलता का आधार है, किन्तु हिंसक परिस्थिति में विद्यालय, नौकरी और यात्रा स्वयं संकटग्रस्त हो जाते हैं। अशोक की उच्च शिक्षा और नीरजा की बी.एड. योग्यता परिवार के आधुनिक भविष्य की आशा हैं, पर असुरक्षा इन उपलब्धियों को फलित नहीं होने देती। नौकरी का आदेश, जो सामान्य समय में सम्मान और स्थिर आय का प्रतीक होता, यहाँ प्रशासन की औपचारिक उपस्थिति और वास्तविक सुरक्षा-अभाव के बीच की विडंबना बन जाता है। विस्थापन के बाद शिक्षा में व्यवधान, दस्तावेजों की समस्या, आर्थिक कठिनाई, नए पाठ्यक्रम और कैंप की संकुचित परिस्थितियाँ युवा पीढ़ी के आत्मविश्वास को क्षीण करती हैं। इस प्रकार उपन्यास में **शिक्षा का संकट भविष्य के अधिकार का संकट** बनकर उपस्थित होता है।

6. सांस्कृतिक स्मृति और मानसिक आघात

विस्थापन का सबसे दीर्घकालीन परिणाम सांस्कृतिक स्मृति का विखंडन है। पर्व, पूजा, स्थानीय भाषा, समावार, रसोई, पड़ोस और वितस्ता से जुड़े संस्कार नई जगह पर पूर्ण रूप से पुनर्स्थापित नहीं हो सकते। शांता का स्मरण- "हम भी बड़ी श्रद्धा से 'पन' का पर्व मनाते थे" उस जीवित परंपरा को भूतकाल में बदलते हुए दिखाता है। [8] स्मृति विस्थापित को पीड़ा देती है, पर वही उसकी पहचान की रक्षा भी करती है।

*"नीलमत विनाश-मत हो गया और वितस्ता **व्यथ** नाम धारण कर कश्मीर की **व्यथा का आईना** हो गई।"*

यहाँ नदी सामूहिक स्मृति का प्रतीक बनती है। घर छूट सकता है, पर उसकी कथा, भाषा और पीड़ा विस्थापित के भीतर जीवित रहती है। इसी कारण 'व्यथ-व्यथा' केवल विस्थापन का वर्णन नहीं, बल्कि उस सांस्कृतिक संसार को साहित्य में सुरक्षित रखने का प्रयास भी है जिसे हिंसा ने भौतिक रूप से विखंडित कर दिया।

निष्कर्ष

हरिकृष्ण कौल का **'व्यथ-व्यथा'** कश्मीरी पंडितों की त्रासदी को किसी राजनीतिक आँकड़े के रूप में नहीं, बल्कि परिवार, घर, बेटी, नौकरी, पड़ोस और स्मृति के टूटने के रूप में प्रस्तुत करता है। उपन्यास में विस्थापन घर छोड़ने से पहले मानसिक स्तर पर आरंभ होता है; आतंकवाद सामुदायिक विश्वास को नष्ट करता है; नीरजा की हत्या स्त्री-सुरक्षा और शिक्षित भविष्य की असफलता को सामने लाती है; कैंप-जीवन पहचान और गरिमा को आहत करता है; और सांस्कृतिक स्मृति विस्थापित मनुष्य के लिए पीड़ा तथा प्रतिरोध दोनों बनती है। कौल की मानवीय दृष्टि पीड़ाओं की प्रतिस्पर्धा नहीं रचती, पर **कश्मीरी पंडित विस्थापन की विशिष्टता** को स्पष्ट रखते हुए यह भी दिखाती है कि हिंसा अंततः पूरे नागरिक समाज की नैतिक संरचना को नष्ट करती है। इस प्रकार कृति **'घर से शरण'**, **'नदी से कैंप'** और **'व्यथ से व्यथा'** तक की यात्रा का महत्त्वपूर्ण साहित्यिक दस्तावेज है।

संदर्भ-सूची-

[1] हरिकृष्ण कौल, व्यथ-व्यथा, भूमिका।
[2] वही, पृ. 157-158।
[3] वही, पृ. 154।

[4] वही, पृ. 140।
[5] वही, पृ. 141।
[6] वही, पृ. 145।
[7] वही, पृ. 151।
[8] वही, पृ. 24।
[9] वही, पृ. 157।

संदर्भ-ग्रंथ-सूची

1. कौल, हरिकृष्ण. व्यथ-व्यथा. दिल्ली: श्री नटराज प्रकाशन, प्रथम संस्करण, 2005.
2. दीप, अमरीक सिंह. कश्मीर त्रासदी : तीन पड़ाव." समकालीन भारतीय साहित्य, मई-जून 2018, पृ. 184.
3. पाण्डेय, अशोक कुमार. कश्मीरनामा : इतिहास और समकाल.
4. कल्हण. राजतरंगिणी, प्रथम तरंग; संपादित/अनूदित रामतेजशास्त्री पाण्डेय.
5. भटनागर, आशुतोष. जम्मू-कश्मीर : एक अवलोकन.

रुकसाना सादिक
एवं
प्रो. ज़ाहिदा जबीन
हिंदी विभाग, कश्मीर विश्वविद्यालय श्रीनगर